षोडशी

रामायण के रहस्य

शेषेन्द्र शर्मा

षोडशी

रामायण के रहस्य

Seshandra : Visionary Poet of the Millenium
http:// seshendrasharma.weebly.com

अनुष्ठान के लिए हो या अनुशीलन के लिए हो – रामायण

वाल्मीकि की कविता के लक्षण कितने लेखकों की रचनाओं के लिए पथ प्रदर्शक हैं ? क्या व्यास जी ने वाल्मीकि के रचना-वैभव का उपयोग कर लिया है ? अशोक-वाटिका में राक्षसी त्रिजटा ने जो सपना देखा है क्या वह गायत्री मंत्र का अर्थ ही है ? सुंदरकाण्ड के लिए वाल्मीकि ने वह नाम क्यों चुना है ? – ऐसे अनेकों प्रश्नों के उत्तर प्रदान करती है गुण्टूरु शेषेन्द्र शर्मा की रचना ''षोडशी''। शेषेन्द्र इस रचना में पग पग पर शास्त्रीय रहस्यों को सेंक कर आगे बढाते गए हैं, षोडशी इसी का परिचय देती है। यह रचना पुनः प्रकाशित होकर पाठकों के सामने आई है। सीता देवी को *कुण्डलिनी शक्ति* के लिए और *पराविद्या* के लिए प्रतीक के रूप में स्वीकार करने वाली वाल्मीकि रामायण के द्वारा ऊपरी तौर पर चाहे राम की गाथा व्यक्त हो पर गहरे स्तर पा *श्रीविद्या* की शिक्षा मिलती है। इसी का निरूपण शेषेन्द्र ने षोडशी में किया है। आध्यात्मक पथ पर चलने की इच्छा रखनेवालों के लिए रामायण कितने ही मार्गों की पहचान कराती है। इन्हीं का सोदाहरण विवरण उक्त रचना में मिलता है। ''*एक देश के झंडे में जितना घमंड रहता है उतना ही घमण्ड मुझ में है*'' : घोषित करनेवाले साहासी हैं शेषेन्द्र। जनवादी कवि के रूप में प्रतिष्ठित पंडित कवि द्वारा उपासना बल और अनुशीलन की गहरी दृष्ठि के योग से उपजी कृति है *षोडशी*। यह भक्ति से पारायण करने वालों और श्रद्धा से अनुसंधा्न करनेवालों दोनों के लिए अनुसरणीय रचना है। रामायण के रहस्यों का उद्घाटन करने में सक्षम रचना है षोडशी। गहराई से पाठक पढें।

तेलुगु दैनिक, ***आंध्रज्योति,*** *रविवार 28.7.2013*

गुन्टूरु शेषेन्द्र शर्मा मेमोरियल ट्रस्ट
हैदराबाद, भारत

षोडशी : रामायण के रहस्य

कवि : शेषेन्द्र शर्मा

तेलुगु *षोडशी रामायण रहस्यमुलु* का अनुवाद

अनुवादक :
डॉ. जगदीश शर्मा
पूर्व निदेशक
कालिदास संस्कृत अकाडमी
उज्जैन, म.प्र.

प्रथम संस्करण : 2006

द्वितीय संशोधित संस्करण : 21 मार्च 2019

© सात्यकि शेषेन्द्र शर्मा के पुत्र

मूल्य : रु. 400/-
ebooks@kinige.com

संपादकीय सहायता :
अचार्य वै. वेंकटरमण राव, डॉ. जे. आत्माराम
हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय
डॉ. बी. सत्यनारायण, श्रीमती पी. उज्वला वाणी
हिंदी अकादमी,
डॉ. बी. वाणी,
पूर्व प्राचार्या वनिता महाविद्यालय

आवरण :
गोलि शिवराम
वेंकट अत्तलूरि, सात्यकि

प्रकाशक :
गुन्टूरु शेषेन्द्र शर्मा मेमोरियल ट्रस्ट
हैदराबाद, भारत

मुद्राकार :
साई लिखिता प्रिंटर्स
खैरताबाद, हैदराबाद

विशेष धन्यवाद

- देशी कृषि में विशेष योगदान के लिए **पद्मश्री** से और के.एल. विश्वद्यिालय के **मानद उपाधी** से विभूषित
  वै. वेंकटेश्वर राव
  चेरमेन - रैतु नेस्तम फौन्डेषन
  संपादक - रैतु नेस्तम मासिक पत्रिकाएँ
- **डॉ. चंद्रशेखरा रेड्डी**
  मुख्य संपादक
  एमेस्को पब्लीकेषन्स

ध्यान दें

मुख्य टिप्पणी

यह पुस्तक प्रथमत: आन्ध्र प्रदेश दैनिक पत्रिका ''आन्ध्र प्रभा'' में सन् 1965 में धारावहिक साहित्यिक - अनुसंधानात्मक निबन्धों के रूप में प्रकाशित हो कर लब्ध प्रतिष्ठित हुई है। तदनंतर यह पुस्तुकाकार में स्वयं कवि के द्वारा ही सन् 1967 में प्रथम बार प्रकाशित है। यही द्वितीय संस्करण के रूप में तिरुमला-तिरुपति देवस्थानम, तिरुपति द्वारा सन् 1981 में पुनर्मुद्रित है। तदुपरांत तृतीय और चतुर्थ संस्करण शेषेन्द्र के पुत्र सात्यकि के द्वारा क्रमश: सन् 2000 2013 2017 यह ई-बुक के रूप में सन् 2014 में पाठकों के सामने आई है। इस का हिंदी में प्रथमश: प्रकाशन सन् 2006 में तथा अंग्रेजी अनुवाद सन् 2015 में संपन्न हुआ है। ये दोनों भी ई-बुक के रूप में इन्टरनेट में उपलब्ध हैं। मूल तेलुगु अंग्रेजी और हिंदी अनुवाद ई-बुक्स उपलब्ध हैं।

- प्रकाशक

विषय सूचि

परिचय :

1. शेषेन्द्र : व्यक्तितव और कृतित्व 6
2. प्ररोचना : डॉ. कमलेशदत्त त्रिपाठी 7
3. अनुवादकीय : डॉ. जगदीश शर्मा 11
4. प्राककथन विश्वनाथ सत्यनारायण 15
5. सांस्कृत भूमिका : गुण्डेराव हरकारे 21
6. आंग्ल परिचय : रामेशन 24

षोडशी : रामायण के रहस्य

प्रथम प्रकरण :

1. पुरोवाक् 28
2. वाल्मीकि के व्याख्याकार 32
3. वाल्मीकि-वैचित्र्य 38
4. वाल्मीकि के शब्द 45
5. नेत्रातुरः- एक चर्चा 53

द्वितीय प्रकरण :

1. श्री सुन्दरकाण्ड को वह नाम कैसे मिला है ? 56
2. श्री सुन्दरकाण्ड कुण्डलिनी योग ही है-1 66
3. श्री सुन्दरकाण्ड कुण्डलिनी योग ही है-2 75
4. श्री सुन्दरकाण्ड कुण्डलिनी योग ही है-3 82
5. श्री सुन्दरकाण्ड कुण्डलिनी योग ही है-4 91
6. श्री सुन्दरकाण्ड-नाम-मीमांसा 104
7. त्रिजटा का स्वप्न गायत्री-मंत्र ही है 111

तृतीय प्रकरण :

1.	भारत रामायण का प्रतिबिम्मब है-1	119
2.	भारत रामायण का प्रतिबिम्मब है - 2	127
3.	भारत रामायण का प्रतिबिम्मब है - 3	132
4.	मेघसन्देश का रामायण से सम्बन्ध	138
5.	रामायण को विष्णुपरक कहने की अपेक्षा इन्द्रपरक कहना अधिक उचित है	148
6.	वेद में इन्द्र तथा विष्णु	175
7.	भारत से रामायण की अर्वाचीनता का मत	185
8.	भारत से रामायण की प्राचीनता-नवीन तथ्य	190
9.	शाकुन्तल का नान्दीश्लोक देवी-स्तुति ही है	234
10.	नृणां एको गम्य:	245

अनुबंध :

1.	राष्ट्रेन्दु शेषेन्द्र पर समावर्तन का एकाग्र	249
2.	युग-प्रवर्तक महाकवि राष्ट्रेन्दु शेषेन्द्र शर्मा ''मेरी धरती - मेरे लोग''	250
3.	राष्ट्रेन्दु शेषेन्द्र : अशेष आयाम	254
4.	सारा काव्य मनुष्य की त्रास-गाधा का महाकाव्य-साक्षात्कार	256

षोड़शी

रामायण के रहस्य

शेषेन्द्र शर्मा

***

सर्वकला संभूषण

गुंटुर शेषेन्द्र शर्मा द्वारा विरचित 'षोडशि' भारत के विमर्शात्मक साहित्य को वैश्विक वाङमय में स्थापित करने वाला अत्युत्तम ग्रंथ है । 'षोडशि' नाम स्वयं महामंत्र से जुड़ा हुआ है । इस नाम को देखकर ही कहा जा सकता है कि यह एक आध्यात्मिक उद्बोधनात्मक ग्रंथ है । वाल्मीकि रामायण के मर्म को आत्मसात करने के लिए कितना अधिक शास्त्रीय-ज्ञान की आवश्यकता है, यह इस ग्रंथ को पढ़ने से ही समझ में आता है । इतना ही नहीं वाल्मीकि रामायण की व्याख्या करने के लिए वैदिक वाङमय की कितनी गहरायी से जनकारी होनी चाहिए, यह सब इस ग्रंथ को देख कर समझा जा सकता है । इसीलिए तो शेषेन्द्र शर्मा के सामर्थ्य, गहन परीक्षण-दृष्टि एवं पांडित्यपूर्ण ज्ञान की प्रशंसा स्वयं कविसम्राट विश्वनाथ सत्यनारायण भी करते हैं, जो कि आप में अनुपम विषय है ।

कथा-संदर्भ, चरित्रों की मनोस्थिति, तत्कालीन समय, शास्त्रीय-ज्ञान, लौकिक-ज्ञान, भाषा पर पूर्ण अधिकार आदि की जानकारी के बिना वाल्मीकि रामायण के मर्म को समझ पाना कठिन कार्य है, कह कर बहुत ही स्पष्ट शब्दों में शेषेन्द्र शर्मा ने वाल्मीकि रामायण के महत्व को उद्घाटित किया है । इस संदर्भ में उनकी नेत्रातुरः विषयक परिचर्चा विशेष उल्लेखनीय है । इसी प्रकार सुंदरकांड नाम की विशिष्टता, कुंडलिनी योग, त्रिजटा स्वप्न में अभिवर्णित गायत्री मंत्र की महिमा, महाभारत को रामायण का प्रतिरूप मानना - इस प्रकार इस ग्रंथ में ऐसे कई विमर्शात्मक निबंध हैं जिनकी ओर अन्य लोगों का ध्यान नहीं गया है । वास्तव में यह भारतीय साहित्य का अपना सत्कर्म ही है कि उसे षोडशि जैसा अद्भत ग्रंथ मिला है ।

तेलुगु मासिक **विपुला** में 2014

वाल्मीकि के व्याख्याकार

"चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्तहस्तासो अस्य त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति-" यह वेद का कथन है। इसका अर्थ है-चार शृंग, तीन पाद, दो शिर तथा सात हाथोंवाला सांड चिल्ला रहा है जो तीन प्रकार से बँधा हुआ है। इससे तुम्हें क्या ज्ञात हुआ?

"द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्य: पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन् अन्योभिचाकशीति॥"

अर्थात् दो साथी गिद्ध एक ही वृक्ष से आलिंगनबद्ध हैं। उनमें से एक सस्वादु पिप्पल को खा रहा है। दूसरा खाए बिना देख रहा है- यह अर्थ बतला भी दिया तो क्या समझ में आया? इसी प्रकार एक और-

"रमा राकेन्दुवदना रतिरूपा रतिप्रया...
नित्यक्लिन्ना निरुपमा निर्वाणसुखदायिनी
कुलोत्तीर्णा भगाराध्या माया मधुमती मही-'

चलो, बता दिया कि ये सब ललिता के नाम हैं, तो क्या समझ में आया? एक और –

सितशोणबिन्दुयुगलं विविक्तशिवशक्तिसङ्गचत्प्रसरम्
वागर्थसृष्टिहेतुः परस्परानुप्रविष्टविस्पष्टम्-'

इसका तात्पर्य हिन्दी में बतला दिया तो तुम्हें क्या समझ में आयेगा? शिव ने मस्तक पर चन्द्रमा को धारण किया-ऐसा बताने पर तुमको लगेगा कि सब कुछ तुम्हें ज्ञात हो गया है, परन्तु यह जान लेना ठीक होगा कि तुम्हें कुछ भी ज्ञात नहीं हुआ है, क्योंकि इन सबके अर्थ शास्त्रमूलक हैं।

रामायण भी इसी कोटि का काव्य है। ऊपर जिनको बतलाया, उनको समझने में यथा वाच्यार्थ कुछ भी सहायता नहीं कर पाता है तथैव रामायण को समझने में भी वाच्यार्थ सहायक नहीं है। राम-सीता के पति थे। पिता की आज्ञा से वे वन में गये –इसमें समझ में न आने वाली बात क्या है? यदि ऐसा कहते हो तो पूर्वोक्त चार सींग, तीन पाद इत्यादि से युक्त वृषभ कहने पर विषय को जितना तुमने समझ लिया, रामायण कथा को भी उतना ही समझ लिया-जानो। वेद से लेकर तंत्र-पुराण आदि सभी ने एकमेव इसी मार्ग का अनुसरण किया है-यह हमारी सुदीर्घ परम्परा है।

वाल्मीकि-वैचित्र्य

जो वेद का परम अर्थ है उसी को विस्तृत करने हेतु इस देश में शास्त्र, पुराण एवं काव्यों का उद्भव हुआ है। ये कवि वेदशास्त्रों में पारंगत हैं, परमार्थ-परायण हैं। जिसे प्रभुसम्मित रीति से बतलाया गया, सुहृत्सम्मित रीति से बतलाया गया, उसी को कान्तासम्मित रीति से बतलाने के निमित्त कवि के रूप में महर्षियों का अवतरण हुआ है। इन लोगों ने शब्दार्थों का आश्रय लिया है तो परम अर्थ के लिए ही। तात्पर्य यह है कि ये शब्दार्थजनित संसार के लोलुप नहीं हैं। यही कारण है कि प्राचीन काव्यों में ही शास्त्र-अर्थ सहज रूप से ध्वनित होते हैं। ऐसे काव्यों से कवि-उद्दिष्ट परम अर्थ का ग्रहण न करते हुए यह मान लेना कि हमने कविता का आस्वाद पा लिया है, केवल अज्ञान या आत्मप्रवंचना ही कही जाएगी। आदि काव्य ने इसी परम्परा का सूत्रपात किया था। महर्षि वाल्मीकि के काल में इतना विस्तृत साहित्य नहीं था। तद्युगीन काव्य मात्र वेदोपनिषदों की दुहिता थी। श्रौतवाङ्मयान्तर्गत शब्द, भाव, रीति या देवता इत्यादि सब कुछ का प्रवेश काव्य में हो गया था। इसका प्रत्यक्ष दृष्टान्त रामायण ही है। वेद, उपनिषद् तथा रामायण काव्य के बीच निहित सम्बन्ध का अनुशीलन किया जाए तो यह अत्यन्त विस्मयप्रद होगा।

रामायण के हृदयरूप सुन्दरकाण्ड ही को लें। कवित्व की दृष्टि से देखें तो यह काण्ड 'न भूतो न भविष्यति'। उसकी महिमा ऐसी कि देवता भी मूर्च्छित हो जाएँ। वस्तुतः मूल रहस्य है कि नलोपाख्यान, मेघसन्देश एवम् नैषध इसकी ही दुहिताएँ हैं। इस विचित्र कथा का विवरण फिर कभी दूँगा। सुन्दरकाण्ड का एक तिहाई भाग मूक चित्रों की भाँति है। हनुमान् का लंकानगर-दर्शन इसी कोटि का प्रसंग है। अशोक वन के वर्णन की बात ले तो उसका शब्द-प्रयोग, भाव-भणिति इत्यादि बड़ा ही विचित्र है। लंका नगर, पुष्पकादि का वर्णन एतद्वत् है। सीता एवं रावण का सर्वप्रथम सम्भाषण आश्चर्यजनक है॥ ''निवर्तय मनोमत्तः स्वजने क्रियतां मनः। न मां प्रार्थयितुं युक्तं सुसिद्धिमिव पापकृत्॥''यह रावण से सीता का प्रथम सम्भाषण है। कैसा है यह वचन? वेदानुशासन की तरह है। निजाज्ञारूपनिगमायै नमः। चमत्कारपूर्ण संवाद अनेक हैं। रावण सीता को प्रलोभन देता हुआ जो कहता है उस पर ध्यान दें। यह आधुनिक कवियों की मनोहारी उक्तियों से भी रमणीय है-

वाल्मीकि के शब्द

काव्य के सन्दर्भ में शास्त्रचर्चा को जो अनावश्यक मानते हैं वे वाल्मीकि के शब्दों के, भावों के स्वरूप तथा स्वभाव को नहीं जान सकते। वे शब्द कैसे प्रयुक्त हैं, किसलिए प्रयुक्त हैं, इसके विवेचन की आवश्यकता उन्हें नहीं है। इसलिए मात्र वाच्यार्थ प्रदत्त रमणीय अर्थलेश से ही वे ऐसे प्रसन्न हो जाते हैं जैसे मानो उन्हें सब कुछ मिल गया हो। उनके हाथों अनेक आर्ष शब्दों को, भावों को उतना सम्मान नहीं मिल पाया, जितना उन्हें मिलना चाहिए था। सीता के महालक्ष्मी होने की ध्वनि वाल्मीकि के द्वारा सम्पूर्ण काव्य में अनुस्यूत है। सुन्दर काण्ड में तो यह विपुलता से उपलब्ध है। ऐसी ध्वनि-संवलित ऋषिप्रयुक्त शब्दों के विशेष अर्थ का स्फुरण भला उन्हें कैसे हो सकता है जिन्हें इसमें जहाँ-तहाँ सामान्य अर्थ ही दिखाई पड़ते हैं।

ऐसे शब्दों में एक है सुन्दर काण्ड में प्रयुक्त 'विद्या' शब्द। ऋषि ने अनेक बार सीता की तुलना विद्या से की है। इसे सामान्य अर्थ में ही लिया जा रहा है, किन्तु पूर्वापर विवेचन कर यह शब्द जिनमें प्रयुक्त है उन श्लोकों का पुनःपुनः चर्वण किया जाए तो स्पष्ट हो जाता है कि 'विद्या' शब्द केवल शास्त्रीय पारिभाषिक अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। दो श्लोकों के द्वारा इसका तत्त्व-विश्लेषण करता हूँ। सुन्दर काण्ड के पन्द्रहवें सर्ग के ३५वें श्लोक में ऋषि ने अशोकवन में क्षीण, शोकमग्न सीता का वर्णन करते हुए 'कृशां मलिनदिग्धाङ्गी विद्यां प्रतिपदीमिव' कहा है (कुछ संस्करणों में यह पाठ अनुपलब्ध है)। तात्पर्य है कि सीता प्रतिपद् विद्या-सी क्षीण हो गयी है। सीता को हम क्या समझें? क्या जानें? इसकी सूचना ऋषि यहाँ दे रहा है। विद्यां प्रतिपदीमिव'- का अर्थ प्रतिपदा की विद्या-सी (क्षीण) कहना, श्रीकृष्ण कौन है इस प्रश्न पर एक यादव है-ऐसा उत्तर देने के तुल्य है। श्रीकृष्ण यादव नहीं है, ऐसी बात नहीं है, किन्तु उस शब्द से जितना जानना चाहिए था, उतना सारा नहीं जाना गया। इसी प्रकार यहाँ विद्या का अर्थ सामान्यतः पाठशालाओं में गुरु के समीप सीखने वाली विद्या का अर्थ हो सकता है, पर रामायण के हृदयभूत सुन्दर काण्ड में अशोक वन में क्षीण दशा में स्थित देवी सीता के लिए आर्ष कवि प्रतिपदा के दिन अभ्यस्त विद्या की भाँति क्षीण-ऐसा कहेगा ? इस उपमान में तथा सीता में समान धर्म केवल एक है -क्षीणत्व। बस, इस एक बात के लिए कवि जिस किस को भी उपमान बना ले, क्या हो सकता है? क्या वह औचित्य का विचार नहीं करेगा? यदि करता है तो ऐसा अर्थ करने की स्थिति बनती है क्या? वे तो घटना के अनुरूप पात्रोचित उदात्त उपमान को ही ग्रहण करते हैं। तब भी वेदशास्त्रजुष्ट वस्तुओं को ग्रहण करना ही उनकी प्रकृति रही है, यह रामायण में सिद्ध ही है। रावण जब सीता

नेत्रातुरः - एक चर्चा

कम शब्दों का प्रयोग कर अधिक अर्थ का निष्पादन करना वाल्मीकि की सहज विशिष्टता है। उदाहरण के लिए -प्रास्पन्दतैकनयनं सुकेश्याः मीनाहतं पद्ममिवाभिताम्रम्'(सुन्दरकाण्ड, २९वां सर्ग,२श्लोक)। इस वाक्य में चित्रित बिम्ब को सामान्य भाषा में कहना हो तो अनेक पदों की अपेक्षा होती। इसी प्रकार 'चञ्चच् चन्द्रकरस्पर्शहर्षोन्मीलिततारका' (किष्किन्धा काण्ड ३० वां सर्ग,४५श्लोक)। 'मत्तः प्रियतरामानं वानरेन्द्र मही तव'(किष्किन्धा काण्ड, २३ वां सर्ग, ३ श्लोक) 'इन्द्रियाणि पुरा जित्वा (युद्धकाण्ड १११ वांसर्ग, १५ श्लोक) इत्यादि अनेक हैं, किन्तु इस कोटि के असंख्य काव्योक्तियों में मकुटायमान है-"सेवमाने दृढं सूर्ये दिशमन्तकसेवितां। विहीनतिलकेव स्त्री नोत्तरा दिक् प्रकाशते॥" (अरण्यकाण्ड, १६वां सर्ग, ८श्लोक)। इस श्लोक में परदाराभिगामी व्यक्ति अपनी स्त्री को वैधव्य प्राप्त कराता है - इस बात की उपमा में कहकर भावी सीता-हरण तथा रावण-वध को सूच्यार्थ से व्यंजित कर समुद्रसम काव्यवैभव को ऋषि ने अपने व्यंग्य-कौशल से श्लोक में उसी प्रकार निक्षिप्त किया जैसे पुष्प के भीतर स्थित छोटे से मकरन्द-बिन्दु में अपार माधुर्य निक्षिप्त रहता है।

एवंविध वाल्मीकीय काव्यभाषा-पद्धति से परिचित व्यक्ति ही 'प्राप्तचारित्रसन्देहा मम प्रतिमुखे स्थिता। दीपोनेत्रातुरस्येव प्रतिकूलासि मे दृढम्' (युद्धकाण्ड,११८ सर्ग, १७ श्लोक) - श्लोक में प्रयुक्त नेत्रातुरेव समास के अर्थ-चमत्कार का आनन्द उठा सकता है। नेत्रातुरः, निद्राबलपराजिताः- इत्यादि समासों में मात्र शब्दप्रदत्त अभिधार्थ इसके तात्पर्यनिर्णय में समर्थ नहीं है।

नेत्रातुरः अर्थात् नेत्ररोगी-यह अर्थ स्वीकार करना उस शब्द के प्रति अन्याय ही होगा। रूढ़ि में ऐसी बात देखी जा सकती है। नेत्रातुर शब्द के लिए नेत्ररोगी- यह रूढ़ अर्थ प्रचलित है, किन्तु वाल्मीकि कालीन शब्दों पर, समासों पर अद्यतन अथवा वाल्मीकोत्तर-कालीन रूढ़ अर्थों का समारोप अर्थबोध में, वाल्मीकीय हृदयावगाहन में सहायक नहीं बन सकता,वरन् भ्रान्ति का कारण बनता है। वाल्मीकि के काल में अथवा व्यास के काल में इन रूढ़ अर्थों में प्रयोग मृग्य है। वैसे प्रयोग उपलब्ध होते तो उनका शोध कर निष्कर्ष निकालने की सम्भावना बनती। टीका-चतुष्टय में भी इस बात की चर्चा नहीं मिलती। अतएव इसके अर्थ का निर्णय हमें ही करना है, पर वह भाषाशास्त्रसम्मत एवं युक्तिसंगत होना चाहिए।

द्वितीय प्रकरण

श्री सुन्दरकाण्ड को वह नाम कैसे मिला है?

तदुन्नसं पाण्डुरदंतमव्रणम्।
शुचिस्मितं पद्मपलाशलोचनम्।
द्रक्ष्ये तदार्यां वदनं कदान्वहम्
प्रसन्नताराधिपतुल्यदर्शनम्।

उन्नत नासिका वाली, शुभ्र दाँतोंवाली, निष्कलङ्क निर्मल मुस्कानवाली,पद्मपत्र सी आँखों वाली इस आर्या का मुख न जाने कब देखूँगा- यह है इस श्लोक का अर्थ। कैसा लग रहा है यह श्लोक? लग रहा है जैसे कि कोई उपासक (भक्त)यह सोच-सोच कर व्यथित हो रहा है कि उसे अपनी इष्ट देवी का साक्षात्कार न जाने कब होगा। आर्यावदनं कहने के कारण वह देवी सम्भवतः जगन्माता हो, ऐसा प्रतीत होता है।पद्मपलाशलोचनम् पद "या सा पद्मासनास्था विपुलकटितटी पद्मपत्रायताक्षी'इस श्लोक का स्मरण कराता है।"कदा काले मातः कथय कलितालक्तकरसं पिबेऽयंविद्यार्थी तव चरण निर्णेजन जलम्"-सौन्दर्यलहरी की ये पंक्तियाँ मन-गगन में कौंध जाती हैं। और भी स्मरण कराती हैं-*शुद्धायै नमः, दरस्मेरमुखाम्बुजायै नमः, विमलायै नमः, पद्मनयनायै नमः, ता पत्रयाग्निसंतप्तसमाह्लादनचन्द्रिकायै नमः, राकेन्दुवदनायै नमः (ल.स.न.)।*

इतने सारे नामों को, बातों को स्फुरित कराने वाला यह श्लोक कहाँ का है? वाल्मीकीय सुन्दरकाण्ड में जनक की पुत्री ,राम की पत्नी,दशरथ की पुत्रवधू-सीता नामक एक क्षत्रिय कान्ता के बारे में बता रहा है यह श्लोक ! न जाने कब उस सीता महादेवी का दर्शन करूँगा- ऐसी उत्कण्ठित,उद्विग्न, हनुमान् की वाणी है जो लंका में सीता का अन्वेषण कर रहा था (१३ वां सर्ग ६८वां श्लोक)। पहले कभी हनुमान् ने सीता को देखा तक नहीं था, किन्तु तदुन्नसं कहते हुए उनका वर्णन कर रहा है जैसे मानो उन्हें भली भाँति जानता हो। यह कैसे सम्भव है ? एक क्षत्रिय कान्ता के विषय में वर्णित श्लोक में इतनी सारी ध्वनियों का संघात कैसे ? वाल्मीकि हुए कवि, रामायण एक काव्य, वर्णित सीता एक मानव कान्ता, हनुमान् हुए महाकपि अर्थात् महावानर -ऐसे लोगों के बारे में लिखते हुए ऐसी शास्त्र स्पर्श करती हुई ध्वनियोंको विकीर्ण करने वाली बातें ! कवि ने इस काव्य को इस प्रकार क्यों लिखा ? यदि मान लें कि कवि को ये अर्थ (ध्वन्यर्थ) उद्दिष्ट अथवा अभिप्रेत नहीं थे तो फिर क्यों उन्होंने सारे श्लोकों के साथ ऐसा ही अन्याय किया। इसीलिए मैं पहले से कहता आ रहा हूँ कि इन काव्यों का

श्री सुन्दरकाण्ड कुण्डलिनी योग ही है (१)

श्रीमद्रामायण में परम पूजनीय महारहस्य बतलाए गए हैं। इसीलिए तो वह पारायणग्रन्थ बना। केवल कथा काव्य होता तो उसे ऐसा पद नहीं मिलता। हम लोग मनुचरित्र (तेलुगु महाकव्य) का पारायण नित्य नहीं करते। यह भी नहीं कहते कि यह काव्य इहलोक और परलोक सुधारता है। यह है इन काव्यों में अन्तर ! रामायण में विद्यमान रहस्यों में परम रहस्य हैं मुमुक्षुओं के लिए उपादेय गायत्री मन्त्र तथा कुण्डलिनी योग-जिसे सुन्दर काण्ड में बतलाया गया है। इस काण्ड का प्रथम श्लोक ही उस रहस्य की मानो प्रस्तावना कर देता है। प्रारम्भिक सातों श्लोक इस काण्ड के मस्तक सदृश हैं। प्रथम श्लोक है-

"ततो रावणनीतायाः सीतायाः शत्रुकर्शनः ।
इयेष पदमन्वेष्टुं चारणाचरिते पथि"

रावण द्वारा ले जाई गई सीता के वास-स्थान को शत्रुकर्शन (हनुमान्) ने चारणाचरित पथ में ढूंढने का विचार किया-यह श्लोक का अर्थ है।

किन्तु यहाँ एक प्रश्न उत्पन्न होता है। अङ्गद आदि वानरों को सीता की खोज में दक्षिण दिशा की ओर भेजा गया। हनुमान् उन्ही में से एक है। इनको सम्पाति ने बतलाया था कि सीता लंका में है। इसीलिए समुद्र को लांघने का प्रयत्न किया गया। उस कार्य के लिए हनुमान् कृतनिश्चय था। अतएव सीता कहाँ है, ये जानते थे। फिर हनुमान् सीता को चारणाचरित पथ में ढूँढने का प्रयत्न क्यों करे ? *चारणाचरिते पथि*-का अर्थ टीकाकारों ने देवगायक चारणों के सञ्चरण का मार्ग-आकाश किया है। आकाश देवसञ्चरण के मार्ग के रूप में तो प्रसिद्ध है, किन्तु देवगायक सञ्चरण मार्ग के रूप में प्रसिद्ध नहीं है। केवल रामायण में ही इस भाँति, एततुल्य कतिपय और पदों का स्थान स्थान पर प्रयोग हुआ है। इसके पूर्व हमें ऐसी शैली दिखलाई नहीं देती, किन्तु व्यास ने महाभारत में इस शैली का अनुसरण किया है। अमरकोश में तो चारणों का नाम तक नहीं है, किन्तु चूंकि वे भी देवता ही हैं, इसलिए देव-मार्ग अर्थ से काम चलाया जा सकता है।

परन्तु सारा रहस्य तो चारण शब्द में ही है।श्रीललितासहस्रनामावली के अन्तर्गत 'बिसतन्तुतनीयसी' नाम पर भास्करराय ने भाष्य लिखते हुए-

'*एवं लोकस्य द्वारमर्चिमत् पवित्रं, ज्योतिष्मत् भ्राजमानं, महस्वत् अमृतस्य धारा बहुधा दोहमानं, चरणन्नो लोके सुधितां दधातु*' इस मन्त्र का अर्थ ऐसा किया-

श्री सुन्दरकाण्ड कुण्डलिनी योग ही है (२)

बार-बार एक ही शब्द का संयोजन, उक्त श्लोक का ही पुनः प्रतिपादन, कथित विषय का ही पुनः कथन—इस पद्धति से बात को लम्बा खींचने वाली पौराणिक शैली है महर्षि वाल्मीकि की रचनाओं की –ऐसा कई लोगों का विचार है। संक्षिप्तता का अभाव, सान्द्रता-राहित्य, अपाणिनीय भाषाप्रयोग-इत्यादि लक्षणों के कारण यह रचना पौराणिक शैलीयुक्त है, किन्तु कालिदास आदि की रचना ऋषि की त्रुटियों को परिमार्जित कर, उसे शोभायुक्त करने वाली सुन्दर शैली से युक्त है–ऐसा इन सज्जनों का अभिप्राय है। यह मात्र भ्रम है। रचना के परमार्थ को ग्रहण न किया जाए तो ऐसे मिथ्या दृश्य प्रकट हो ही जाते हैं, किन्तु परम अर्थ यदि गोचर हो जाए तो प्रतीत होगा कि पुनरुक्ति इत्यादि ये सारे लक्षण यहाँ नितान्त आवश्यक हैं और ऋषि वाल्मीकि की रचना में एक भी अक्षर अनावश्यक नहीं है। वेद में क्या व्यर्थ द्विरुक्ति है? व्यर्थ की दीर्घता है? विचार करें। समस्त वेद मन्त्रमय है। विश्वास जमा लीजिए कि ऋषि की रचना वेद है, फिर उसका अनुशीलन करें। सब कुछ विदित हो जाएगा। प्रधानतया ऋषि की रचनाओं में छह विशेषताएँ हैं। पहली, प्रत्येक शब्द का प्रयोग उसकी व्युत्पत्ति को दृष्टि में रखकर किया जाता है। दूसरी, साधारणतया श्लोकों में ध्वनि होती है। तीसरी, साधारणतया ध्वनि के लिए ही शब्द प्रयुक्त किए जाते हैं। चौथी, कतिपय श्लोकों में शैली बदलकर एक से अधिक अर्थों को अभिव्यक्त करने वाला एक विचित्र शब्द-व्यूह दिखाई देता है। पाँचवीं, ध्वनि-उद्दिष्ट शब्द प्रायः तीन-चार बार पुनरुक्त हो जाते हैं। छठी, वाक्य दो श्लोक पादों में ही समाप्त हो जाए, ऐसा नियम यहाँ नहीं है। इन सब बातों का विवरण अभी मैं नहीं दूँगा। मेरे रामायण सम्बन्धी निबन्धों को ध्यानपूर्वक जो पढ़ते हैं, उनको स्पष्ट हो जाएगा कि कुल मिलाकर ये सारी बातें हैं, किन्तु ऊपर लिखित छह लक्षणों में से तीसरे तथा चौथे लक्षण को विशेष रूप से स्मरण रखना चाहिए। यही तो रामायण के परम अर्थ के ज्ञान की कुंजी है।

सब को विदित ही है कि महाकवि कालिदास महर्षि वाल्मीकि के मानस पुत्र हैं। ऐसा मानने के लाखों कारण हो सकते हैं, पर कुछ कारण भर ज्ञात हो जाएँ तो फिर ऐसी भावना उत्पन्न हो सकती है न ! अज्ञात कारण और भी हो सकते हैं। उनमें से दो अज्ञात कारणों को बतलाना ही मेरा प्रकृत उद्देश्य है। ये दोनों मेरे द्वारा परिगणित छह लक्षणों में से अति प्रधान दो वाल्मीकीय लक्षण हैं। अनेकार्थस्फोरक शब्द-व्यूह-निर्माण की बात न तो कालिदास के लिए प्रथित है और न वाल्मीकि के लिए, किन्तु मैं यहाँ प्रतिपादित कर रहा हूँ कि यह बात दोनों में है और यह शैली वाल्मीकि से कालिदास को संक्रमित हुई है। देखिए

श्री सुन्दरकाण्ड कुण्डलिनी योग ही है (३)

महर्षि वाल्मीकि ने सुन्दरकाण्ड में चार महत्त्वपूर्ण रहस्यों को निक्षिप्त किया है। एक, हनुमान् का कुण्डलिनी योग; दो, त्रिजटा स्वप्न रूप एक अद्भुत रहस्य (अभी इसे विवृत नहीं कर रहा हूँ); तीन, रावण का कौल मार्ग। शेष इनके ही आनुषंगिक हैं।

कुण्डलिनी योग प्रारम्भ करने के पूर्व हनुमान् द्वारा अनुष्ठित नित्यकर्मादि पूर्वरंग को बतलाया जा चुका है। शेष बातों को बतला रहा हूँ। सुन्दरकाण्ड के प्रारम्भ के सात श्लोकों को छोड़कर आगे बढ़ जाइए (ये नित्यकर्म सम्बन्धी है)। उसके बाद के श्लोकों में ऋषि द्वारा गोप्य रहस्यों को विवृत कर रहा हूँ। समुद्र लाँघने से पहले हनुमान् देवस्तुति कर रहा है -

"स सूर्याय महेन्द्राय पवनाय स्वयम्भुवे।
भूतेभ्यश्चाञ्जलिं कृत्वा चकार गमने मतिम्॥" (१.८)

इसका भाव है कि हनुमान् ने सूर्य,महेन्द्र,वायु,ब्रह्मा तथा पञ्चभूतों को प्रणाम किया। इसके पश्चात्-

"अञ्जलिं प्राङ्मुखं कुर्वन् पवनायात्मयोनये।
ततो हि ववृधे गन्तुं दक्षिणो दक्षिणां दिशम्॥" (१.९)

सूर्य आदि को प्रणाम कर पुन: वह पूर्व की ओर मुड़कर आत्मयोनि रूप वायु को प्रणाम किया - यह है इसका अर्थ ! प्रारम्भ में नमस्कृत सूर्य आदि में वायु उद्भूत है तो पुनः वायु को विशेष रूप से नमस्कार करने का गूढार्थ क्या है? क्या कुछ भी नहीं है? इनमें उल्लिखित देवता कौन हैं? न तो त्रिमूर्ति हैं, न इन्द्रादि बृन्दारक हैं, न तो कोई क्रम है, भिन्न-भिन्न देवताओं का समूह है यह ! ऋषि ने यूँ ही यदृच्छा से जो मुँह में आया उन्हीं नामों को कह दिया क्या ? क्या रामायण पढ़ने वालों के मन में यह प्रश्न उठना चाहिए कि नहीं ? उन पर ध्यान न देते हुए, गहराई में न जाते हुए, अन्धों की भाँति बाहर के वाच्यार्थ से सन्तुष्ट होकर ग्रन्थ को पढ़ लेना ही क्या रसज्ञता है, पाण्डित्य है, परम अर्थ जिज्ञासा है ?

गम्भीरता से अनुशीलन करें तो यह प्रणाम-प्रार्थना उपनिषन्मूलक है। ये देव और कोई नहीं, श्रुति-प्रोक्त इन्द्रियाधिदेव है-

"इन्द्रियपालकानसृजत्।दिग्वातार्कप्रचेतोश्ववह्नीन्द्रोपेन्द्रमृत्युकाः।
चन्द्रो विष्णुश्चतुर्वक्त्रः शम्भुश्च करणाधिपाः।"

End of Preview.

Rest of the book can be read @

http://kinige.com/book/Shodasi+Ramayan+Ke+Rahasy

* * *